जनसत्ता

8 फरवरी, 2019

आखिर सहमति

सबरीमला मंदिर का संचालन करने वाले त्रावणकोर देवस्वओम बोर्ड ने आखिरकार सर्वोच्च न्यायालय के आदेश का पालन करने पर सहमति जताई है। बोर्ड की तरफ से पेश हुए वकील ने संविधान में वर्णित सभी व्यक्तियों के धर्म पालन के समान अधिकार का उल्लेख करते हुए स्वीकार किया कि किसी वर्ग विशेष के साथ उसकी शारीरिक अवस्था की वजह से पक्षपात नहीं किया जाना चाहिए। इस तरह आयु विशेष की महिलाओं के सबरीमला मंदिर में प्रवेश संबंधी प्रतिबंध हटने की स्थिति बनी है। अभी तक सबरीमला मंदिर में एक खास आयुवर्ग की महिलाओं के प्रवेश का निषेध था। इस पर जब यंग इंडियन लायर्स एसोसिएशन ने जनहित याचिका दायर की, तो त्रावणकोर देवस्वओम बोर्ड और अनेक संगठनों ने उसका यह कहते हुए विरोध किया था कि सबरीमला मंदिर में भगवान अयप्पा का विशेष स्वरूप है और इसे संविधान के तहत संरक्षण प्राप्त है, इसलिए महिलाओं के प्रवेश की अनुमति मंदिर की गरिमा को चोट पहुंचाएगी। मगर सर्वोच्च न्यायालय ने तमाम सुनवाइयों के बाद मंदिर में महिलाओं के प्रवेश की अनुमति दे दी थी। उसके बाद भी देवस्वओम बोर्ड और उसके तर्कों से सहमत तमाम संगठन और राजनीतिक दल विरोध करते रहे। मंदिर के आसपास कड़ा पहरा लगा दिया गया, ताकि कोई महिला प्रवेश न करने पाए।

सर्वोच्च न्यायालय के आदेश के बावजूद जब सबरीमला मंदिर में महिलाओं के प्रवेश पर प्रतिबंध लगा रहा, तो विरोध प्रदर्शन तेज हो गए। इस बीच कुछ महिलाएं मंदिर में प्रवेश कर गईं, तो मंदिर संचालन बोर्ड ने मंदिर को पवित्र करने का अनुष्ठान कराया। उन महिलाओं की सुरक्षा खतरे में पड़ गई। राज्य सरकार और मंदिर की विशेष स्थिति के पक्ष में खड़े लोगों के बीच तनातनी का माहौल बना रहा। इस पर सर्वोच्च न्यायालय ने एक बार फिर सुनवाई की और मंदिर संचालन बोर्ड का पक्ष जानना चाहा। उसमें बोर्ड की तरफ से पेश हुए वकील ने मान लिया कि महिलाओं को मंदिर में प्रवेश मिलना चाहिए। यह विवेकपूर्ण कदम है। एक लोकतांत्रिक समाज में इस तरह का भेदभाव किसी भी रूप में उचित नहीं कहा जा सकता। इसके पहले शनि शिंगणापुर मंदिर में भी महिलाओं का प्रवेश प्रतिबंधित था, पर कुछ महिला संगठनों ने इसे कानूनी चुनौती दी, तो वहां भी महिलाओं का प्रवेश सुनिश्चित हो सका। यह ठीक है कि धर्म और आस्था के मामले में बहुत सारे तर्कों का कोई मतलब नहीं होता, पर जैसे-जैसे सामाजिक स्थितियां बदलती हैं, लोगों के सोचने-समझने के स्तर का विकास होता है तो परंपरा से चली आ रही कई मान्यताएं और धारणाएं भी बदलती हैं। वैसे में आस्था से जुड़े सवालों को भी पुनर्व्याख्यायित करने की जरूरत पड़ती है। इस लिहाज से सबरीमला मंदिर मामले में बोर्ड का कदम सराहनीय है।

महिलाओं की पवित्रता-अपवित्रता से जुड़ी अनेक प्राचीन मान्यताएं अब तर्क की कसौटी पर बेमानी साबित हो चुकी हैं। वैज्ञानिक तथ्यों के आलोक में बहुत सारी रूढ़ियां ध्वस्त हो चुकी हैं। इसलिए सबरीमला संचालन बोर्ड का उनकी पवित्रता-अपवित्रता को लेकर दृष्टिकोण संकीर्ण ही साबित हो रहा था। फिर जब हमारा संविधान सभी नागरिकों को, चाहे वे महिला हों या पुरुष, धर्म और आस्था के मामले में भी समान अधिकार देता है, तो कुछ मंदिरों में विशेष स्थिति का तर्क देते हुए उन्हें इससे वंचित रखना एक तरह से संवैधानिक मर्यादा के भी खिलाफ है। अच्छी बात है कि सबरीमला संचालन बोर्ड ने महिलाओं के लिए प्रवेश द्वार खोलने पर सहमति व्यक्त की है।

राहत भरा कदम

रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति समिति ने नीतिगत दरों में कमी कर इस बात का संकेत दिया है कि महंगाई अब काबू में है, मुश्किलों का दौर खत्म हो रहा है और अर्थव्यवस्था के लिए आने वाले दिन अच्छे होंगे। मौद्रिक नीति समिति की तीन दिन तक चली बैठक के आखिरी दिन इस बात के संकेत आने लगे थे कि इस बार महंगाई काबू में रहने के कारण केंद्रीय बैंक लचीला रुख अपनाएगा और नीतिगत दरों में कमी करेगा। केंद्रीय बैंक ने अब रेपो और रिवर्स रेपो दर में एक चौथाई फीसद की कमी कर दी है। रिजर्व बैंक के इस फैसले का लंबे समय से इंतजार था। कर्ज सस्ता या महंगा होने का गणित इसी पर टिका होता है और इसका सीधा और पहला असर उन उपभोक्ताओं पर पड़ता है जिन्होंने घर, गाड़ी, शिक्षा जैसी जरूरतों के लिए अपने बैंक से कर्ज लिया है या जो लोग इस इंतजार में रहते हैं कि कब कर्ज सस्ता हो और वे घर और गाड़ी खरीदने की योजना बनाएं।

रिजर्व बैंक की नीतिगत दरों के अनुरूप ही व्यावसायिक बैंक अपने कर्ज और सावधि जमाओं की ब्याज दरें तय करते हैं। इसलिए अब यह तय है कि व्यावसायिक बैंक भी कर्ज की दरें घटाएंगे, इससे कर्ज सस्ता होगा और बैंकों से कर्ज लेने वाले उपभोक्ताओं की मांग तेजी से बढ़ेगी। इसका सीधा और तात्कालिक असर वाहन बाजार और रियल एस्टेट बाजार पर पड़ेगा। लंबे समय से रियल एस्टेट बाजार में मंदी छाई हुई है और घर खरीदने वाले सस्ते कर्ज के इंतजार में थे। अगर रियल एस्टेट और वाहन बाजार उठता है तो इससे जुड़े अर्थव्यवस्था के दूसरे क्षेत्रों में भी तेजी का रास्ता बनेगा। हालांकि सावधि जमाओं पर ब्याज में कटौती निराश कर सकती है। मौद्रिक नीति समिति की यह बैठक पहली बार नए गवर्नर की अगुआई में हुई है। छह में से चार सदस्य नीतिगत दरों को कम करने के पक्ष में थे। दो सदस्यों का कहना था कि इसे स्थिर बनाए रखने की जरूरत है। इससे यह संकेत मिलता है कि नए गवर्नर ने तटस्थ रुख अपनाना बेहतर समझा है। यह इस बात का भी संकेत माना जा सकता है कि आने वाले वक्त में रेपो दर और कम की जा सकती है। अभी तक केंद्रीय बैंक महंगाई के जोखिम के मद्देनजर सख्त रुख अपनाए हुए था। लेकिन डेढ़ साल में पहली बार ऐसा हुआ है जब पिछले साल दिसंबर में मुद्रास्फीति सबसे कम (2.2 फीसद) रही और नीतिगत दरें कम करने का रास्ता साफ हुआ।

रिजर्व बैंक का अनुमान है कि अब महंगाई परेशान नहीं करेगी और इस वित्त वर्ष की आखिरी तिमाही में महंगाई दर 2.8 फीसद रहेगी। अगर ऐसा रहा तो रिजर्व बैंक नीतिगत दरों को नीचे ला सकता है। लेकिन बाद के महीनों में महंगाई दर बढ़ने का जोखिम बरकार है। इसीलिए मौद्रिक समिति ने साफ तौर पर कहा है कि सब्जियों और तेल की कीमत, स्वास्थ्य और शिक्षा महंगी होने, वित्तीय बाजारों में उतार-चढ़ाव और मानूसन को लेकर सतर्क रहने की भी जरूरत है। रिजर्व बैंक को अभी उम्मीद है कि अंतरिम बजट में कर रियायतों और किसानों के लिए जो घोषणाएं हुई हैं उनसे बाजार में मांग बढ़ेगी और अर्थव्यवस्था पर इसका अच्छा असर दिखेगा। पिछले साल केंद्रीय बैंक ने जून और अगस्त में रेपो दर बढ़ाई थी। बैंक को यह सख्त कदम इसलिए उठाना पड़ा था कि महंगाई का ग्राफ तेजी से ऊपर जाने का खतरा बना हुआ था। ऐसे में लंबे समय बाद नीतिगत दरों में कटौती उपभोक्ताओं को राहत देने वाली होगी।

कल्पमेधा

विचित्र बात है कि सुख की इच्छा
मेरे दुख का एक अंश है।
-खलील जिब्रान

मुसीबत में भारतीय छात्र

अभिषेक कुमार सिंह

करीब आठ साल पहले कैलिफोर्निया की ट्राई-वैली यूनिवर्सिटी का घोटाला सामने आया था। जनवरी 2011 में जब अमेरिका की सिटिजनशिप एंड इमिग्रेशन सविर्सेज ने जांच की थी तो यह विश्वविद्यालय वीजा फ्रॉड में शामिल पाया गया था। बाद में उसे बंद करा दिया गया नतीजतन, इससे वहां पढ़ रहे एक हजार से ज्यादा भारतीय छात्रों का भविष्य अंधकारमय हो गया था। इसी के फौरन बाद जुलाई 2011 में जब यूनिवर्सिटी ऑफ नॉर्दर्न वर्जीनिया की जांच की गई, तो वहां भी ऐसा ही वीजा घोटाला सामने आया।

अमेरिका में 'पे एंड स्टे' गिरोह का भंडाफोड़ होने से वहां भारतीय छात्रों के फंसने की घटना ने ऐसी समस्या की तरफ ध्यान खींचा है जो एक ओर पढ़ाई व नौकरी के लिए यूरोप-अमेरिका जाने की भारतीय ललक सामने रखती है, तो दूसरी तरफ बाहर जा रहे लोगों की छानबीन और उन्हें मानव तस्करी से बचाने के उपायों की खामियों को उजागर करती है। तीस जनवरी को अमेरिका से खबर आई कि वहां एक फर्जी विश्वविद्यालय की आड़ में अवैध रूप से लोगों को अमेरिका में ठहराने का धंधा चलाया जा रहा है। इस विश्वविद्यालय को चलाने के आरोप में आठ भारतीयों और भारतीय मूल के अमेरिकी लोगों को गिरफ्तार किया गया। उसके बाद अमेरिका के आव्रजन एवं सीमा शुल्क प्रवर्तन विभाग ने विश्वविद्यालय से एक सौ तीस छात्रों को भी गिरफ्तार कर लिया, जिनमें एक सौ उनतीस भारतीय हैं। ये छात्र इस विश्वविद्यालय में पढ़ने के लिए पंजीकृत थे, लेकिन पढ़ाई करने के बजाय देश भर में काम कर रहे थे। हालांकि भारत ने इस मामले में तुरंत प्रतिक्रिया देते हुए अपनी ओर से राजनयिक विरोध दर्ज करा दिया। विदेश मंत्री ने यह वादा भी किया कि इन भारतीय छात्रों को कानूनी मदद दिलाई जाएगी, ताकि इन पर कोई कड़ी कार्रवाई न हो। बाद में यह भी पता चला कि यह फर्जी विश्वविद्यालय असल में एक स्टिंग ऑपरेशन के तहत अमेरिका ने खुद बनाया था। अमेरिका के मिशिगन राज्य में यूनिवर्सिटी ऑफ फार्मिंग्टन नाम से इस विश्वविद्यालय को अमेरिकी सुरक्षा बलों के एजेंट ही चला रहे थे, ताकि पैसे के बदले अवैध प्रवास की चाहत रखने वालों को पकड़ा जा सके। हालांकि भारतीय अधिकारियों ने कहा कि जिन भारतीय छात्रों ने इस विश्वविद्यालय में दाखिला लिया, मुमकिन है कि वे ठगी के शिकार हो गए हों। अमेरिकी प्रशासन का कहना है कि जिन छात्रों ने इस विश्वविद्यालय में दाखिला लिया था, वे जानते थे कि यह एक अवैध विश्वविद्यालय है और ऐसे लोगों का मकसद अमेरिका में अवैध रूप से रुकना और काम करना था। दावा है कि विश्वविद्यालय का इस्तेमाल पैसे के बदले अवैध रूप से अमेरिका में रहने देने की स्कीम के तौर पर किया गया। अवैध प्रवास की इच्छा से पहुंचे लोगों की धरपकड़ के स्टिंग ऑपरेशन जैसे अभियान अमेरिका में पहले भी चलाए जाते रहे हैं।

अमेरिका और यूरोपीय देश बीते करीब एक दशक से वीजा नियमों में धांधली का हवाला देकर उनमें तब्दीली की चेतावनी भी देते रहे हैं। छह साल पहले (2013 में) एक अमेरिकी सीनेटर ने वीजा धांधलियों का हवाला देते हुए अमेरिका में काम कर रही भारत की तीन आइटी कंपनियों का नाम लेकर आरोप लगाया था कि ये छोटी अवधि के लिए अमेरिका में काम करने को इच्छुक विदेशी पेशेवरों को दिए जाने वाले एच-1-बी वीजा का दुरुपयोग कर रही हैं। आरोप था कि ये कंपनियां ऐसे कमर्चारियों को यह वीजा दिला रही हैं जो कम वेतन लेकर अमेरिका में काम करने को राजी हो जाते हैं। इसका असर माइक्रोसॉफ्ट जैसी बड़ी अमेरिकी कंपनियों पर पड़ता है जो ऐसा वीजा ज्यादा संख्या में नहीं दे पाने के कारण अपने कर्मचारियों पर ज्यादा पैसे खर्च करने को बाध्य होती हैं। तब उस सीनेटर ने इसे एक तरह का वीजा फर्जीवाड़ा करार दिया था। हालांकि उस वक्त भी डरबिन के बयान और रवैये पर किसी को आश्चर्य नहीं हुआ क्योंकि उस दौरान खुद अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा अपने पहले चुनावी कैंपेन के वक्त से ऐसी ही संरक्षणवादी बयानबाजी करते रहे हैं। उन्होंने यह कह कर अपने नागरिकों को भयभीत किया भी था कि क्या होगा अगर ज्यादातर नौकरियां भारतीय कंपनियों के पास चली जाएंगी और उन्हें तब बंगलुरु जाकर काम करना पड़ेगा। यदि इस मसले के दूसरे पहलू यानी आव्रजन में धांधली को देखें, तो यह खुद अमेरिका की अपनी समस्या भी है। क्योंकि ऐसे ज्यादातर वीजा घोटाले खुद अमेरिकी कर रहे हैं। करीब आठ साल पहले कैलिफोर्निया की ट्राई-वैली यूनिवर्सिटी का घोटाला सामने आया था। जनवरी 2011 में जब अमेरिका की सिटिजनशिप एंड इमिग्रेशन सविर्सेज ने जांच की थी तो यह विश्वविद्यालय वीजा फ्रॉड में शामिल पाया गया था। बाद में उसे बंद करा दिया गया जिससे इससे वहां पढ़ रहे एक हजार से ज्यादा भारतीय

छात्रों का भविष्य अंधकारमय हो गया था। इसी के फौरन बाद जुलाई 2011 में जब यूनिवर्सिटी ऑफ नॉर्दर्न वर्जीनिया की जांच की गई, तो वहां भी ऐसा ही वीजा घोटाला सामने आया। इसके अगले साल अगस्त 2012 में कैलिफोर्निया के सनीवेल स्थित हरग्वेन यूनिवर्सिटी में वीजा घोटाला सामने आया था। इससे वहां पढ़ रहे वाले 400 भारतीय छात्रों के भविष्य का संकट पैदा हुआ था, क्योंकि अमेरिका के इमिग्रेशन एंड कस्टम्स इनफोसर्मेंट ने विश्वविद्यालय की मान्यता वापस लेने के लिए नोटिस जारी किया था। इसलिए अमेरिकी सीनटरों को यह समझाना होगा कि भारतीयों को कठघरे में खड़ा करने के साथ-साथ साफ-सफाई की एक जरूरत खुद उनके अपने घर में भी है।

हालांकि कई दशकों से कनाडा, अमेरिका से लेकर सऊदी अरब आदि दूसरे देशों से श्रमिकों को धोखे से लाकर जबर्दस्ती काम करवाने का कारोबार चल रहा है। भारत और आसपास के देशों से अपना सब कुछ बेच कर या गिरवी रख कर गए लोगों के पासपोर्ट उन्हें लाने वाले दलाल या कंपनियां अपने कब्जे में कर लेती हैं और उनके शोषण का अंतहीन सिलसिला चलता रहता है। वैसे तो भारत सरकार का प्रवासी मंत्रालय ऐसे प्रवासियों के लिए फिक्रमंद तो दिखता है जो रोजगार के लिए यूरोप-अमेरिका, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया जैसे विकसित देशों में जाते हैं। मोटे तौर पर इन आइटी पेशेवरों और इंजीनियरों की नौकरी व अन्य हित सुरक्षित माने जाते हैं, लेकिन वैश्विक मंदी ने उनके रोजगारों पर भी असर डाला है। फिर भी अमेरिका और यूरोप का ऐसा रवैया थोड़ा हैरान ही करता है क्योंकि वहां भारतीय आइटी कंपनियों ने ज्यादातर मामलों में किसी अमेरिकी या यूरोपीय कानून की अवहेलना नहीं की है। इन कंपनियों ने न सिर्फ आइटी से संबंधित नौकरियों में ब्रिटेन-अमेरिका में बेहद प्रतिस्पधी माहौल बनाया है बल्कि यूरोपीय-अमेरिकी समुदाय में नई चुनौतियों के बरक्स खड़ा होने का साहस और जुझारुपन पैदा किया है।

विदेशों में खास तौर पर रोजगार के लिए गए करीब एक करोड़ दस लाख से अधिक प्रवासी भारतीयों के लिए संकट यह है कि उन्हें स्थानीय श्रम कानूनों में होने वाले फेरबदल के साथ-साथ सिकुड़ते रोजगार विकल्पों की समस्या से भी जूझना है जिन पर अब स्थानीय लोग दावा करने लगे हैं। ऐसे में सवाल यह है कि कुशल और अकुशल श्रमिक के रूप में बाहर गए अनिवासी भारतीयों के हित में हमारी सरकार को क्या-क्या उपाय करने चाहिए जिससे उनसे मिलने वाली विदेशी मुद्रा निर्बाध ढंग से देश में आती रहे और बाहरी मुल्कों में उन प्रवासियों के हित भी सुरक्षित रहें। सरकार कबूतरबाजी के चोर दरवाजे बंद करके इसकी शुरुआत कर सकती है। इसके बाद उसे गौर करना चाहिए कि जिन देशों में भारतीय कामगार व आइटी पेशेवर जा रहे हैं, क्या उनके आव्रजन में वहां के वीजा और श्रम कानूनों से कोई खिलवाड़ तो नहीं किया जा रहा है। साथ ही, यदि उन देशों के वीजा और श्रम कानूनों में कोई बड़ी तब्दीली नजर आए तो ऐसे लोगों को वहां जाने से रोक लेना चाहिए। ऐसा करके ही हम अपने युवाओं के रोजगार और भविष्य को सुरक्षित बना सकते हैं।

परिवेश का पाठ

मुजतबा मन्नान

दुनिया मेरे आगे

हाल ही में प्राथमिक शिक्षा से जुड़े एक सर्वेक्षण के दौरान राजस्थान के बांसवाड़ा जिले के आदिवासी इलाके में स्थित एक स्कूल में कक्षा तीन के बच्चों से बातचीत करने का मौका मिला। दरअसल सर्वेक्षण के लिए कक्षा तीन के बच्चों की परीक्षा लेनी थी और उससे पहले बच्चों को परीक्षा से संबंधित निर्देश समझाने थे। निर्देश समझाते हुए मैंने महसूस किया कि बच्चे मेरी बात को ठीक से समझ नहीं पा रहे हैं।

स्थिति को देखते हुए विद्यालय में मौजूद एक शिक्षक से मैंने इस बारे में बात की। परीक्षा के निर्देशों में लिखा था कि निर्देश और प्रश्न उस भाषा में समझाने हैं जिसमें बच्चे सहज हों और आसानी से समझ जाएं। लेकिन मैंने जब शिक्षक से बच्चों के संदर्भ में बातचीत की तो उन्होंने अपने विचार रखते हुए कहा- 'बच्चों को हिंदी कम समझ आती है।' मैं शिक्षक से मदद मांगता, उससे पहले शिक्षक ने कहा- 'देखिए सर, ये अनपढ़ आदिवासियों के बच्चे हैं, इनको पढ़ना-लिखना नहीं आता है, ठीक से हिंदी भी नहीं बोल पाते हैं'.. इत्यादि।

परिस्थिति को देखते हुए एक अन्य शिक्षक की मदद से बच्चों की परीक्षा ली। शिक्षक ने बच्चों को उनकी परिवेशीय भाषा में ही निर्देश दिए, प्रश्नों को समझाया और बच्चों द्वारा रखी गई जिज्ञासाओं पर अपने विचार रखे। परीक्षा के बाद जब शिक्षक के साथ मिल कर बच्चों द्वारा हल किए गए प्रश्न पत्रों की जांच की गई तो उम्मीद से बेहतर परिणाम पाया। अधिकतर बच्चों ने प्रश्नों का उत्तर देते समय अपनी परिवेशीय भाषा के शब्दों का चयन किया और सही उत्तर लिखा। यह विद्यालय के असंख्य उदाहरणों में से केवल एक है जो विद्यालय में परिवेशीय भाषा के महत्त्व पर बल देता है।

दुनिया में मनुष्य को सभी प्राणियों में सर्वोच्च माना गया है जिसकी एक अहम वजह भाषा है। मनुष्य ने भाषाई विकास के साथ अपनी संस्कृति विकसित की है। यही एक बड़ा फर्क है जो उसे अन्य प्राणियों की जमात से अलग करता है। अतः मनुष्य के सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में भाषा का अहम योगदान रहता है। सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में बच्चा सबसे पहले अपने परिवेश की चीजों से रूबरू होता है। उसके बाद धीरे-धीरे अवलोकन और अनुभवों से वह सीखता है। इसलिए बच्चे के सीखने में उसकी परिवेशीय भाषा का अहम योगदान रहता है, क्योंकि घर-परिवार में वह अपनी परिवेशीय भाषा के माध्यम से ही बातचीत करता है। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो, कोई भी मनुष्य पहले अपने परिवेश की भाषा के आधार पर सीखता है, उसके बाद दूसरी भाषा के संपर्क में आता है।

अगर प्रारंभिक स्तर पर विद्यालय में शिक्षण एक ऐसी भाषा में होता है जिसे स्थानीय परिवेश, आदिवासी और अल्पसंख्यक बच्चे नहीं जानते हैं, तब ऐसी स्थिति में बच्चे बिना कुछ समझे यांत्रिक रूप से शिक्षक की बातों का दोहराव करते हैं। जैसे, अक्सर हिंदी भाषी क्षेत्रों में बच्चे अंग्रेजी की कक्षाओं में शिक्षक की बातों का दोहराव करते हैं। इस कारण बच्चों में भाषा की मदद से चिंतन क्षमता का विकास नहीं हो पाता है और फिर बच्चे अन्य स्कूली विषयों में भी पिछड़ जाते हैं। इसी कारण अनेक बच्चे पढ़ना-लिखना और अन्य स्कूली विषयों को सीखे बिना ही स्कूल छोड़ देते हैं। वैश्विक स्तर पर साक्षरता के क्षेत्र में होने वाले अनेक शोध बताते हैं कि विद्यालय में प्रारंभिक वर्षों में मातृभाषा में शिक्षण न होने से बच्चों के स्कूल छोड़ने की संभावना बढ़ जाती है, जबकि प्रारंभिक वर्षों में बच्चे की मातृभाषा में शिक्षण होने से स्कूल छोड़ने की दर में कमी आई है।

दरअसल, बच्चा जन्म के साथ ही परिवेशीय भाषा सीखना शुरू कर देता है और फिर परिवेशीय भाषा में बातचीत करने और चीजों को समझने-समझाने की क्षमताओं के साथ विद्यालय में दाखिल होता है। अगर बच्चे की क्षमताओं का इस्तेमाल पढ़ाई के माध्यम के रूप में मातृभाषा का चुनाव करके किया जाए तो इसके सकारात्मक परिणाम देखने को मिलते हैं। इसलिए शिक्षकों से उम्मीद की जाती है कि वे उन सभी विषयों पर बातचीत करें जिनके बारे में बच्चों को पूर्वानुभव और ज्ञान होता है। अगर बच्चे अपनी परिवेशीय भाषा में शिक्षा ग्रहण करते हैं तो बच्चों के अभिभावकों को भी सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में जुड़ाव का मौका मिलता है। यह बच्चे के बौद्धिक और सामाजिक विकास के लिए महत्त्वपूर्ण होता है।

प्रारंभिक वर्षों में शिक्षक की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो जाती है कि वह परिवेशीय भाषा में संवाद, चिंतन और विचार-विमर्श को दैनिक शिक्षण प्रक्रियाओं में शामिल कर बच्चों को प्रोत्साहित करे, ताकि प्रारंभिक शिक्षा पूर्ण होने से पहले बच्चे शिक्षण की अन्य भाषाओं से परिचित हो जाएं और आगे की शिक्षा के लिए अपनी पसंद की भाषा में, अपनी पसंद की शिक्षा का चयन कर सकें।

आरक्षण में सेंध

पिछले दिनों सरकार ने सामान्य वर्ग के गरीब तबकों के लिए नौकरियों और शैक्षणिक संस्थाओं में दस प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान कर दिया। इसके लिए संविधान में संशोधन कर 'आर्थिक आधार' को भी पिछड़ेपन का कारण बनाया गया जबकि मूल संविधान में केवल सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन पर आरक्षण का प्रावधान था। सत्तारूढ़ दल जोर-शोर से ढिंढोरा पीट रहा है जबकि विपक्ष, जिसमें तथाकथित पिछड़ों का प्रतिनिधित्व करने वाले दल भी हैं, भी तथाकथित सवर्णों के वोट के लिए इस नई आरक्षण व्यवस्था का समर्थन कर अपने योगदान के लिए श्रेय लेने में लगा है। तर्क है कि इस नई व्यवस्था के कारण पहले से आरक्षण प्राप्त तबके को कोई नुकसान नहीं होगा। लेकिन गहराई से विश्लेषण करने पर साफ हो जाता है कि यह नई आरक्षण की व्यवस्था सीधे आरक्षण के सिद्धांत पर चोट है। दरअसल, आरक्षण का सिद्धांत प्रतिनिधित्व से जुड़ा है। लेकिन सरकार ने आर्थिक आधार पर आरक्षण का प्रावधान कर इसे गरीबी उन्मूलन का कार्यक्रम बना दिया।

आरक्षण का प्रावधान इस लक्ष्य के साथ किया गया था कि जो ऐतिहासिक रूप से शोषित और पिछड़े रह गए उनका भी प्रतिनिधित्व सरकारी सेवाओं और शैक्षणिक संस्थानों में सुनिश्चित हो सके। लेकिन विडंबना देखिए कि सामान्य वर्ग, जो अपनी जनसंख्या से अधिक प्रतिनिधित्व रखता है, उसे ऊपर से आरक्षण भी दिया जा रहा है। हाल ही में द इंडियन एक्सप्रेस में प्रकाशित आंकड़े भी सामान्य वर्गों के 'ओवर रिप्रजेंटेशन' यानी अधिक प्रतिनिधित्व को पुष्ट करते दिखे। आरक्षण को गरीबी उन्मूलन का कार्यक्रम बनाना आरक्षण व्यवस्था पर सीधा हमला और इसके उद्देश्य को धूमिल करना है। आरक्षण का उद्देश्य धूमिल होने से सीधा नुकसान अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) और दलितों को होगा। गणितीय दृष्टिकोण से देखें तो अब पहले की तुलना में अनारक्षित सीटों की संख्या घटेगी। मसलन, 100 में से 40 सीटें ही अनारक्षित रहेंगी जो पहले 50 होती थीं। परिणामतः अनारक्षित सीटों से चयनित होने के लिए पिछड़े तबकों के लिए प्रतिस्पर्धा बढ़ेगी और संभावना कम होगी।

इन सबके उलट दुखद बात है कि पिछड़े वर्गों के नुमाइंदे विरोध में सामने आने के बजाय सवर्णों के तर्कों में फंस कर हां में हां मिला रहे हैं। हमारे समाज की सच्चाई है कि तथाकथित उच्च जातियां हमेशा से आरक्षण विरोधी रही हैं। उनका प्रयास रहा है कि या तो आरक्षण खत्म हो या उन्हें भी मिले क्योंकि सबको आरक्षण मिलने का अर्थ हुआ कि किसी को आरक्षण नहीं मिला!

● *राहुल राज, नवादा, बिहार*

सियासी बिसात

लोकसभा चुनाव की आहट भर से राजनीतिक दलों ने बिसात बिछा कर शह और मात का खेल शुरू कर दिया है! सबसे खास पहलू इस खेल का यह है कि हमेशा की तरह मोहरा जनता ही रहेगी। इस मोहरे का इस्तेमाल कैसे किया जाए ये राजनीतिक दल अपने-अपने हिसाब से कूटनीति बनाने में जुटे हुए हैं। अब राजनीतिक दलों की जातिगत समीकरण की बजाय धार्मिक समीकरण पर ज्यादा तवज्जो है। नफरत फैलाने में कई दलों की भागीदारी सबके सामने ही है! घर मुसलमान का जले तो रोए हिंदू या फिर घर हिंदू का जले रोए मुसलमान- वाली संस्कृति अब दुर्लभ हो चली है। विडंबना है कि राजनीतिक दलों के नेता सेक्युलरिज्म लबादा ओढ़ कर सांप्रदायिकता का घिनौना तमाशा दिखाने को बेताब रहे हैं। जैसे-जैसे चुनाव करीब आएंगे इन नेताओं के सीने के ताले खुलते जाएंगे। लेकिन अब बड़ा सवाल है कि क्या जनता इन राजनीतिक दलों के झांसे में न आकर मुल्क की सेक्युलर और राष्ट्रवाद की बुनियाद को मजबूत करने में अपनी भूमिका अदा करेगी?

● *मोहम्मद फारूक सुलेमानी, बालोतरा, राजस्थान*

शहीदों से साथ

'रोटी और फीस के लिए दो-दो हजार में बिक गए शहीदों के वीरता पदक समाचार' पढ़ कर आंखें भर आईं। अदम्य साहस और वीरता से दुश्मनों के छक्के छुड़ाने के फलस्वरूप मिले पदक अपने परिवार के पालन-पोषण एवं शिक्षा की खातिर बेचने की मजबूरी सैनिकों के दिलों पर वज्रपात सरीखी है। यह मजबूरी देश के लिए सर्वस्व न्योछावर करने वाले जांबाजों के अरमानों की बलि है। पदक विजेता सैनिकों के परिवारवालों की माली हालत सुधारने के लिए सरकारों के साथ ही समाजसेवी संस्थाओं को भी अविलंब आगे आने की आवश्यकता है।

● *पारस एफ खेमसरा, तिरुपति विहार, सांवेर, इंदौर*

स्वच्छता का सपना

पिछले दिनों देश ने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 71वीं पुण्यतिथि पर उन्हें श्रद्धांजलि दी। वैसे असल में साफ-सुथरा समाज और देश का निर्माण ही गांधीजी के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी क्योंकि उनका पूरा जीवन स्वच्छता के प्रति आग्रह से जुड़ा रहा है। उनका मानना था कि एक राष्ट्र के तौर पर उदय के लिए हमें राजनीतिक आजादी नहीं बल्कि गंदगी और बीमारियों से स्वतंत्रता चाहिए होगी। उन्होंने स्वच्छता को जीवन चरित्र का हिस्सा माना था और इसे रचनात्मक कार्यक्रमों की अनिवार्य सूची में शामिल किया था। वे कहते थे कि स्वच्छता ही सेवा है और साफ-सफाई ईश्वर भक्ति के बराबर है तथा यह किसी खास तबके का काम नहीं बल्कि सामूहिक जिम्मेदारी है। उन्होंने स्वच्छ, स्वस्थ और खुशहाल भारत का सपना देखा था । मगर आजादी के दशकों बाद भी हम उनके इस सपने को पूरा करने में नाकाम रहे हैं।

जब 2014 में राजग की सरकार बनी तो उनके इसी सपने को पूरा करने के लिए सरकार ने 2 अक्तूबर 2014 को प्रधानमंत्री की अगुवाई में 'स्वच्छ भारत मिशन' की शुरुआत की जिसने जल्दी ही जनांदोलन का रूप ले लिया। इस मिशन के लिए बजट में विशेष प्रावधान किए गए और स्वच्छता से जुड़ी अनेक योजनाएं चलाई गईं जिनमें स्वच्छता पखवाड़ा, नमामि गंगे, स्वच्छता एक्शन प्लान प्रमुख हैं। इसी का परिणाम है कि ग्रामीण भारत में नौ करोड़ से अधिक शौचालयों का निर्माण संभव हो पाया जिसकी वजह से आज 27 राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों ने खुद को खुले में शौच से मुक्त घोषित किया है। 2014 में लगभग 39 प्रतिशत घरों में ही शौचालय उपलब्ध थे जबकि 2019 में यह प्रतिशत बढ़कर लगभग 99 हो गया है। अब जब हम इस वर्ष दो अक्तूबर को गांधीजी की 150वीं जयंती मनाएंगे तो हमारा उद्देश्य तब तक शत-प्रतिशत लक्ष्य प्राप्ति पर रहेगा। साथ ही हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि स्वच्छता को अपनी आदत में शुमार करें और दिनचर्या का हिस्सा बना लें। तभी सच्चे अर्थों में हम गांधी के सपनों का भारत बनाने में सफल हो पाएंगे।

● *सत्य प्रकाश, चकसाहो, समस्तीपुर, बिहार*

चौपाल

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com